'वर्दी में जल्लाद' अर्थात् निजी ख़बरिया चैनलों की भाषा

विनीत कुमार

आम तौर पर समाचार चैनलों की भाषा पर जो भी बहसें हुई है, उसमें दो तरह के लोग शामिल हैं। एक वे जो अकादमिक संस्थानों से जुड़े है, जिनके हिसाब से चैनलों ने भाषा को भ्रष्ट किया है, अपने ढंग से तोड़ा-मरोड़ा है, व्याकरणिक शर्तों की परवाह नहीं की है। दूसरे वे लोग हैं, जो सीधे-सीधे समाचार चैनलों से जुड़े हैं, जिनके मुताबिक चैनलों के लिए भाषा की शुद्धता और नियमों की अनिवार्यता से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है, सहज संप्रेषण यानि (आम आदमी) के हिसाब से भाषा प्रयोग। इन दोनों स्थितियों पर गौर किया जाए तो चैनलों की भाषा को लेकर कोई विश्लेषण पद्धति या प्रक्रिया का विकास नहीं हुआ है। बल्कि अपने-अपने पक्ष में तर्क खड़े करने की कोशिश भर है।

ऐसा इसलिए हुआ है कि अकादमिक क्षेत्र से जुड़े लोग भाषा की शुद्धता, नियम एवं उसके शर्तों को पकड़कर चलना चाहते हैं, और जब समाचार चैनलों की भाषा पर बात करते हैं, तो उनका जोर होता है कि चैनल भी भाषा प्रयोग इसी के हिसाब से करे। एक तरह से चैनल कौन-सी भाषा, किस रूप में प्रयोग करे, अकादमिक क्षेत्र के लोग तय करना चाहते हैं।

यह संभव है कि भाषा के प्रति समझदारी पैदा करने में अकादमिक संस्थानों का बड़ा योगदान रहा हो, इन संस्थानों ने लोगों को भाषा-प्रयोग से लेकर इसके महत्त्व के बारे में जानकारी दी हो। और आज अगर ये संस्थान टेलीविज़न और समाचार चैनलों का भाषा-प्रयोग अपने हिसाब से करना चाहते हैं तो इसकी वजह भी यही है कि जब समाज को भाषा पढ़ाने-समझाने का जिम्मा उनका है तो टेलीविज़न अपने मुताबिक़ उनसे अलग भाषा-प्रयोग क्यों करे, या उनकी शर्तों के हिसाब से क्यों न करे।

लेकिन अकादमिक स्तर का यह तर्क समाचार चैनलों के व्यावहारिक दृष्टिकोण से बहुत पीछे छूट जाता है। क्योंकि समाचार चैनल जब भाषा का प्रयोग करते हैं, तो उसके पीछे सिर्फ़ सहज संप्रेषण का मसला नहीं होता बल्कि उसके पीछे एक दबाव की रणनीति काम कर रही होती है। दबाव की यह रणनीति समय, बाज़ार एवं व्यावसायिक शर्तों से लेकर अपने को हमेशा बनाए रखने और बचाए रखने

की होती है। यानि टेलीविज़न में भाषा-प्रयोग का एक बड़ा आधार है, खुद को बचाए रखने एवं सबसे आगे ले जाने की कोशिश। इसलिए समाचार-चैनल भाषा-प्रयोग करते समय अपने को ऑथिरिटी मानकर नहीं चलता, ये अलग बात है कि आम जनता आज टेलीविज़न की प्रस्तुति एवं भाषा को ऑथिरिटी मानती है और उस हिसाब से उसका व्यवहार बदलता हैं, जबकि अकादमिक संस्थान शुरू से भाषा के मामले में अपने को ऑथिरिटी मानती आयी है। लेकिन आज समाचार चैनलों ने लगातार अपने ढंग से भाषा-प्रयोग शुरू किया है, ऐसे में अकादमिक संस्थानों की ऑथिरिटी ध्वस्त हुई है। इस लिहाज़ से हम बात करें तो समाचार चैनलों को लेकर जो बहसें होती रहीं है, उनमें अपने-अपने पक्ष में बात करने का सीधा मतलब है भाषा को आखिर कौन तय करेगा। इस पर बहस और दूसरा कि समाचार चैनल अपनी भाषा-स्ट्रैटजी तय करते समय आम आदमी की भाषा की बात करते हैं, वह आम आदमी की भाषा कौन-सी है, या फिर टेलीविज़न में सचमुच आम आदमी की कोई भाषा होती है। और एक बड़ा सवाल कि समाचार चैनल आज मीडिया कर्म से अधिक प्रबंधन का कार्य हो गया है, जिसमें समाचार-निर्माण की पूरी प्रक्रिया, वस्तु निर्माण की प्रक्रिया की तरह ही होने लगी है, और वस्तु के लिए जो पैकेजिंग और वितरण है वह समाचार के लिए वितरण, ऐसे में भाषा किस रूप में काम करती है?

सबसे पहले हम बात करें भाषा की ऑथिरिटी को लेकर। दूरदर्शन शुरुआती दौर से लेकर अब तक जिस भाषा का प्रयोग करता आया है उसे आम जनता की भाषा के बजाए भाषा का मानक-प्रयोग कहना ज़्यादा उचित होगा। क्योंकि शुरू से इसने भाषा को लेकर एक ढांचा खड़ा किया और उसी हिसाब से भाषा-प्रयोग करता आया। इसे काफी हद तक सरकारी काम-काज़ की भाषा भी कह सकते हैं। वाक्य संरचना से लेकर शब्दों के चयन तक में इसने अकादमिक स्तर के रुझानों का अनुकरण किया और लगातार इस कोशिश में रहा कि टेलीविज़न के जरिए भाषा/हिन्दी को एक मानक रूप दिया जाए। इसलिए दूरदर्शन को भाषा में अकादमिक संस्थानों से कोई टकराव नहीं है बल्कि काफ़ी हद तक संतुलन की स्थिति है।

समाचार चैनल और आम आदमी की भाषा के संबंध में दूरदर्शन का अपना नज़रिया है। दूरदर्शन की रणनीति है कि आम आदमी की भाषा को ज़्यादा शामिल करने के बजाए ज़रूरी है कि दूरदर्शन की भाषा को लोगों के बीच आम बनाया जाए। यानि भाषा के ज़रिए लोगों के बीच एकरूपता लाने की कोशिश। ऐसे में सरकारी प्रतिष्ठान और अकादमिक संस्थाएँ भाषा का, हिन्दी की जो कार्यालयी संस्करण प्रस्तुत करती है, कमोवेश वही रूप दूरदर्शन लागू करता गया। इसलिए आम आदमी की भाषा का भी मुद्दा दूरदर्शन में जोरदार ढंग से नहीं उठाया गया। इस बीच एक बड़ी बात हुई कि लोग दूरदर्शन को भाषा की समझ बनाने का माध्यम मानने लगे और धीरे-धीरे यह स्थापित हो गया कि दूरदर्शन के माध्यम से भाषा सीखी जा सकती है और यह भी कि दूरदर्शन जिस भाषा (हिन्दी) का प्रयोग करता है वही हिन्दी का परिष्कृत रूप है।

..... और जब बात दबाव के कारण भाषा पर पड़ने वाले प्रभाव और बदलते रूप की जाए तो इसमें दूरदर्शन पर बहुत ख़ास फ़र्क़ नहीं पड़ा है। दूरदर्शन के एजेंडे में यह कहीं नहीं है कि अपने को बचाए रखने के लिए मार्केट ओरिएंटेड होकर काम करें, प्रतिस्पर्धा और व्यावसायिक दबाव के साथ काम करें। यह अलग बात है कि केबल और निजी टेलीविज़न के फैलते जाल के बीच अपने को लोकप्रिय बनाए रखने के लिए प्रस्तुति एवं अन्तर्वस्तु के स्तर पर अपने को काफ़ी कुछ बदला है, लेकिन भाषा की बुनावट में यह साफ-साफ नहीं झलकता।

निजी टेलीविज़न चैनलों में भाषा की ऑथिरिटी, आम आदमी की भाषा और दबाव में भाषा-व्यवहार और इसके जरिए टेलीविज़न की दुनिया में भाषा-संस्कृति की निर्मित हमें साफ़ दिखायी देता है, लगभग सारे निजी समाचार चैनलों ने अकादमिक मान्यताओं को चुनौती दी, अपने को इस दावे के साथ पेश

किया कि वह आदमी के लिए है और घोषित रूप से भले ही कुछ न कहें लेकिन प्रतिस्पर्धा और बाज़ार की लड़ाई में हर समाचार चैनल शामिल है और इन सबके बीच हर चैनल भाषिक-संस्कृति का निर्माण करता है।

निजी टेलीविज़न चैनलों की भाषिक-संस्कृति पर बात करने के क्रम में अगर *आजतक* को आधार मानकर विश्लेषण किया जाए तो यहाँ भी तीन आधार बिन्दु बनते हैं, जहाँ इसने अपने को अलग ढंग से स्थापित करने की कोशिश की है।

1) भाषा की ऑथिरिटी

2) भाषा ऑथिरिटी बनाम भाषा निर्मित

3) दबाव, चैनल की रणनीति और भाषा निर्मिति

1) भाषा की ऑथिरिटी

भाषा/हिन्दी के प्रयोग को लेकर अकादमिक संस्थानों और दूरदर्शन के बीच तालमेल और मतभेद चल ही रहा था कि भारतीय टेलीविज़न की दुनिया में निजी टेलीविज़न चैनलों का बड़े ही प्रभावी ढंग से आगमन हुआ। 1991 का यह वह दौर था, जब भूमण्डलीकरण, निजीकरण और उदारीकरण का सीधा असर संचार एवं जनमाध्यमों के क्षेत्र में दिखायी देने लगा। एक-एक करके कई निजी समाचार चैनल खड़े होते गए और इसी क्रम में *आजतक* हिन्दी न्यूज चैनल जिसकी पकड़ उत्तर भारत की हिन्दी पट्टी में विशेष रूप से है -ने अपने को 'सबसे तेज़' के रूप में स्थापित किया। समाचारों की प्रस्तुति और अन्तर्वस्तु के स्तर पर दूरदर्शन पर पर्याप्त भिन्नता के साथ ही भाषा को लेकर इसने कई प्रयोग किए। दूरदर्शन की तराश और भाषा के मानक रूप को छोड़कर इसने भाषा को उसी रूप में प्रसारित करना शुरू किया, जिस रूप में इसका प्रयोग लोगों के बीच होता है। एक तरह से हिन्दी की भाषा और बोली के बीच की स्थिति को प्रसारित करना शुरू किया। ऐसा नहीं है कि *आजतक* को भाषा के मानक रूप की प्रकृति की समझ नहीं रही, इसने भाषा को बहुत अधिक परिष्कृत न करके इसकी प्रस्तुति में ऑथिरिटी को स्थापित करना चाहा। ताकि दर्शकों के बीच यह विश्वास बनाया जा सके कि वे जो कुछ भी कहते हैं, उसकी हू-ब-हू प्रस्तुति यह चैनल करता है। चैनल इसी सोच के साथ समाचार का प्रसारण करता रहा है।

दिल्ली पुलिस और पार्किंग के साँठ-गाँठ के कई मामले सामने आए हैं, और इन सबके बीच दिल्ली पुलिस अपना खाल बचाने में लगी है।"[1]

यहाँ संवाददाता का स्थितियों के बयान के साथ-साथ आम आदमी का आक्रोश और दिल्ली पुलिस को लेकर जो उनका एप्रोच है, वह भी शामिल है। यानि समाचारों को लेकर अब तक तटस्थता की जो आदर्श स्थिति बतायी जाती रही है, *आजतक* का भाषा-प्रयोग इसे तोड़ता है और तटस्थता बनाम पक्षधरता की बहस में खुलकर शामिल होता है। ऐसे में समाचारों की प्रस्तुति में अनुशासनात्मक एवं संयमित भाषा का प्रयोग अनिवार्य है, यह मान्यता भी एक झटके में टूट जाती है। यहाँ पर यह भी समझने वाली बात है कि भाषा और संस्कृति पर विचार करते समय भाषा को संस्कृति का एक हिस्सा या सहयोगी घटक बताया जाता रहा है, यह दृष्टिकोण भी पुराना पड़ जाता है। आज समाचार चैनलों में अन्तर्वस्तु यानि कन्टेंट को लेकर उतनी विविधता नहीं है, जितनी की प्रस्तुति और भाषा-प्रयोग को लेकर। इसलिए एक स्थापना बनती है कि *आजतक* ने भाषा के माध्यम से एक संस्कृति, सामाजिक संस्कृति या फिर सैद्धांतिक स्तर पर विश्लेषित संस्कृति से भिन्न एक भाषाई संस्कृति स्थापित की है। भाषाई संस्कृति अर्थात् शब्दों और भाषा प्रयोग से एक परिवेश निर्मित होता है जो कि लगातार चैनल के पक्ष को लगातार स्पष्ट करता

रहता है। चैनल के सबसे तेज़ और देश का सर्वश्रेष्ठ न्यूज़ चैनल होने के जो दावे हैं उसे लगातार मजबूती मिलती रहती है।

"सुनीता विलियम्स लौट रही हैं, मात्र 30 सेकेण्ड के अंदर अटलांटिस छू लेगा धरती की सतह को।"[2]

सुनीता विलियम्स छह महीने से भी ज़्यादा अंतरिक्ष में रहकर लौट रही है, लोगों में इस बात को लेकर उत्सुकता है, बेचैनी है, आशंका है और घबराहट है। चैनल दर्शकों के इन सारे मिले-जुले भाव को व्यक्त करता है, और दावा करता है कि मिनट-मिनट की ख़बर सीधे वह जनता तक पहुँचा रहा है। वाक्य-विन्यास और प्रस्तुति के स्तर पर यह समाचार / बुलेटिन से ज़्यादा कमेंट्री है।

"प्रार्थना का असर हुआ, साइंस का बेहतर असर हुआ, सलाम सुनीता, सुनीता तुझे सलाम।"[3]

लगातार बोले जाने के बीच ऐंकर भाषा का प्रयोग सुनियोजित ढंग से कर रहा है, बल्कि एक बदहवाश-सी स्थिति पैदा होती है। एक भाषाई-परिवेश की निर्मिति है। जहाँ दर्शक के चढ़ने-उतरने वाले मनोभावों के बीच लगे कि कुछ भी सुनियोजित ढंग से प्रस्तुत करने की गुंजाइश नहीं है।

आजतक ने दूरदर्शन के ठीक उलट भाषा के माध्यम से एक ऐसा महौल बनाने को कोशिश की जहाँ दर्शक/आम जनता और चैनल के बीच कुछ भी बनावटी या सम्पादित न लगे।

इस संदर्भ में भाषा की ऑथिरिटी पर विचार करें तो दूरदर्शन की रणनीति जहाँ आम आदमी को शामिल करते हुए आम आदमी को भाषा के स्तर पर समझदार बनाना है, वहीं *आजतक* यह स्थापित करता है कि हमें जनता की बात कहनी है जनता की भाषा यहाँ केन्द्र में है। जनता की ऐसी भाषा जो व्याकरणिक नियमों, शर्तों और भाषा के अनुशासन के प्रति बहुत सचेत नहीं है, लेकिन तल्खी से अपनी बात रख सकती है। इसलिए आजतक भाषा की ऑथिरिटी जनता को मानता है।

दूरदर्शन की भाषा को अगर लोग भाषा के प्रति समझ बनाने के लिए करते हैं तो *आजतक* की भाषा को अपनी बात है, अपने हिसाब से बात कही जा रही है, इसलिए अपनाते है। *आजतक* ने भाषा की ऑथिरिटी का क्रम भले ही उलट दिया हो लेकिन समाचार चैनल की भाषा को जनता ज़्यादा फॉलो करती है। यह प्रक्रिया अब भी जारी है।

2) भाषा ऑथिरिटी बनाम भाषा निर्मित

भाषा पर ऑथिरिटी का एक दूसरा पहलू यह भी है कि प्रयोग के स्तर पर चैनलों की भाषाई भिन्नता के बावजूद समाचारों की प्रकृति के मुताबिक़ एक सामान्य भाषा होती है। मसलन खेल समाचार की अपनी भाषा होती है, तो क्राइम से जुड़ी ख़बरों के लिए दूसरे ढंग की भाषा होती है। ऐसे में भाषा की ऑथिरिटी बहुत अधिक चैनलों की न होकर ख़बरों की हो जाती है। दूरदर्शन और पिछले कुछ साल तक के निजी समाचार चैनलों का यही ढर्रा रहा है। लेकिन *आजतक* पर समाचारों के प्रसारण में यह देखने में आया कि भाषा की ऑथिरिटी को दूसरे ढंग से स्थापित करने की कोशिश की जा रही है। यह जानते हुए कि ख़बरों की प्रकृति के हिसाब से उसकी भाषा दूसरे चैनलों की भाषा से बहुत अलग नहीं होगी, प्रचलित भाषा-प्रयोग के बीच भी यूनिकनेस पैदा करने की कोशिश करता है।

"दिल माँगे सेक्स।"[4]

'दिल माँगे मोर' पेप्सी का विज्ञापन है, अगर कोई दूसरी कोल्ड ड्रिंक बनानेवाली कम्पनी इसका इस्तेमाल करे तो उस पर कारवाई हो सकती है, लेकिन *आजतक* सेक्स के प्रति बढ़ती जिज्ञासा और इंटरनेट पर जुड़ी बातें खोजने की बात को दिल माँगे सेक्स के नाम से प्रसारित करता है।

एक दूसरे स्लग पर ग़ौर करें, एक माँ ने अपनी ही बेटी को दफ़ना दिया, *आजतक* ने प्रसारित

किया

"माँ ये तूने क्या किया?"[5]

'प्यार ये तूने क्या किया' गाने से प्यार को हटाकर माँ शब्द को रख दिया गया जैसे पहले स्लग में 'मोर' को हटाकर सेक्स का प्रयोग किया गया।[6] मोर पर एक कोल्ड ड्रिंक की ऑथिरिटी है, जबकि 'प्यार तूने क्या किया' पर एक फ़िल्म की, लेकिन चैनल उसे अपने मतलब के हिसाब से काट-छाँटकर इस्तेमाल करता है। इस अर्थ में यह नए ढंग की ऑथिरिटी पैदा करना है, जहाँ कहीं के भी शब्द समाचार की प्रस्तुति के काम आ सकते हैं। इस तरह के शब्दों के प्रयोग से समाचार की प्रकृति के अनुरूप शब्दों के प्रयोग की धारणा टूटती है।

3 दबाव, चैनल की रणनीति और भाषा निर्मिति

समाचार चैनलों का विकास जबरदस्त प्रतिस्पर्धा के माहौल में हो रहा है। यह प्रतिस्पर्धा सबसे पहले दिखाने की है और सबसे पहले दिखाकर सबसे बेहतर साबित करने की है। बेहतर होने का लाभ चैनल को अधिक से अधिक विज्ञापन और मूल्य पैदा करने के रूप में मिलेगा। इसलिए यह प्रतिस्पर्धा चैनलों में समाचार-निर्माण पर प्रक्रिया से लेकर प्रस्तुति तक दबाव पैदा करती है। चैनल इस दबाव का इतना अभ्यस्त हो चुका है कि दबाव में होकर काम करना यहाँ समस्या या चुनौती नहीं बल्कि शैली है, एक अनिवार्यता है, और यही समाचार चैनलों की संस्कृति भी। चैनलों के भीतर यह दबाव कई स्तरों पर है:

1. समय
2. बाज़ार एवं प्रतिस्पर्धा
3. लागत एवं अर्जन और
4. अपने को बनाए रखने की मजबूरी।

इन सारे दबावों के बीच *आजतक* की भाषा निर्मिति पर विचार करें तो अकादमिक भाषा-शर्तों का कोई मायने नहीं रह जाता और न ही दूरदर्शन के भाषा संबंधी विचार इसके काम के रह जाते हैं। आजतक पर यह दबाव और चैनलों की अपेक्षा ज़्यादा है, क्योंकि प्रतिस्पर्धा की दौड़ में सबसे आगे और सबसे तेज़ होने की कवायद उसकी कार्यशैली का सबसे बड़ा हिस्सा है। *आजतक* की भाषा को जो कि कमोवेश हर चैनलों पर लागू होता है इन सारे दबावो के साथ समझा जा सकता है:

1. समय का दबाव और *आजतक* की भाषा प्रसारण ख़बरों की तात्कालिकता और कम से कम समय में अधिक ख़बरों के प्रसारण ने समाचार की संरचना को पूरी तरह बदल दिया है। ऐंकर द्वारा ख़बरों की प्रस्तुति और रिपोर्टर द्वारा लाइव आँखों देखा हाल के अलावे न्यूज़ फ़्लैश, टिकर और न्यूज़-अपडेट्स और हेडलाइंस जैसे ख़बरों की प्रस्तुति का नया अंदाज़ सामने आया है।

आजतक की हेडलाइंस हैं :

"मासूम की सलामती में उठे हजारों हाथ",

"भारत के नाम पर मनमोहन सिंह परेशान"[7] इन दोनों हेडलाइंस में एक बात सामान्य है कि कहीं कोई सहायक क्रिया नहीं है। यानि अब स्थापित हो गया है कि हेडलाइंस और स्लग में सहायक क्रिया नहीं होते।

दूसरी बात हेडलाइंस और स्लग की शब्द-सीमा तय होगी। हेडलांइस 7-10 शब्दों के बीच होगी तो स्लग 3-4 शब्दों के बीच।

स्लग – किलर बसों पर ब्रेक।[8]

– पाकिस्तान बोले सेक्स-सेक्स[9]

शब्दों की सीमा तय हो जाने से मौजूद शब्दों पर ज़िम्मेदारी बढ़ जाती है। जो बात 20 से 25 शब्दों में स्पष्ट होनी चाहिए उसकी जगह पर 3 से 4 शब्दों में काम चलाने की कोशिश की जाती है। ऐसे में अनिवार्य हो जाता है कि परिस्थितियों के हिसाब से पंचलाइन की तरह स्लग या हेडलाइंस तैयार किए जाएँ। अगर इसे महज़ एक वाक्य के रूप में देखा जाए तो "भारत के नाम पर मनमोहन सिंह परेशान" से कोई भी बात स्पष्ट नहीं होती। लेकिन अगर संदर्भों की समझ पहले से हो तो इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि पकड़े गए आतंकवादी को बार-बार भारतीय कहने से मनमोहन सिंह दुखी हैं। ठीक उसी तरह 'किलर बसों पर ब्रेक' से चैनल स्थापित करता है कि किलर बस का अर्थ दिल्ली में चलने वाली ब्लू लाइन बस है, जिस पर सरकार रोक लगाने जा रही है। यानि शब्दों की संख्या सीमित कर देने से ऐसा नहीं है कि बात का पूर्ण अर्थ मिल जाता है बल्कि पहले या बाद के समाचारों पर निर्भरता बढ़ती है, जिसे जान लेने पर ही स्लग या हेडलाइंस का अर्थ खुलता है। इसलिए समय के दबाव से सहायक क्रियाएँ तो ग़ायब हो गयीं, शब्द-सीमा तय हो गयी और मौजूदा शब्दों के प्रति ज़िम्मेवारी भी बढ़ गयी। लेकिन ऐसा नहीं है कि 3-4 शब्दों के स्लग पूरे समाचार के आशय को स्पष्ट करने में सक्षम हो गए।

समय के दबाव का असर मुहावरे के प्रयोग में भी देखने को मिलते हैं। प्रचलित मुहावरे एवं कहावतें जो सामाजिक गतिविधियों एवं प्रचलनों से बने, जिसे कि बाद में अकादमिक संस्थानों ने सूत्रबद्ध किया। ये मुहावरे ज्यों की त्यों समाचारों में तो आए ही, साथ ही समाचार चैनलों ने अपने मुहावरें भी गढ़े।

"यानि वे इस्लामिक छवि पर बट्टा लगाने की कोशिश कर रहे हैं।"[10]

"जाको राखे साईयाँ मार सके न कोई, शब्द बहुत पुराने हैं, लेकिन ये शब्द कानों में गूँज जाते हैं।"[11]

इन दोनों मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग बहुत पुराना है, लेकिन संदर्भ के हिसाब से सटीक बैठता है, इसलिए इसका प्रचलन आज भी जारी है।

इस अर्थ में *आजतक* मुहावरों और कहावतों को लगातार रेक्टीफ़ाई करता है, क्योंकि यहाँ सबसे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है संदर्भ और इसी के हिसाब से नए मुहावरे भी बनते हैं।

"वर्दी में जल्लाद"[12]

"सेक्स की भी राजधानी है दिल्ली"[13]

यहाँ वर्दी का ताल्लुक़ व्यवस्था से जुड़े लोगों से है, जिन पर जनहित का ज़िम्मा है, जबकि जल्लाद उस मनोवृत्ति की ओर संकेत करता है जहाँ विवेक से कोई मतलब नहीं होता, एक कठोर नियम के तहत काम करना होता है। 'टीटीई ने बिना टिकट यात्रा कर रहे एक यात्री को धक्के देकर ट्रेन से बाहर फेंक दिया और उसकी मौत हो गयी'।

दिल्ली पूरे देश की राजधानी है, इसमें कोई नयी बात नहीं है लेकिन नया मुहावरा है कि दिल्ली में सेक्स के प्रति जिज्ञासा ज़्यादा है, ज़्यादा लोग सेक्स साइट पर जाते हैं।

इस तरह के मुहावरे संदर्भ और सामयिक परिस्थितियों के आधार पर निर्मित किए जाते हैं, जो कि धीरे-धीरे एक रूढ़ अर्थ में प्रयोग होने लगते हैं। जैसे, ब्लू लाइन के लिए मौत की बस और जनकपुरी डिस्ट्रिक्ट सेंटर के लिए **मौत की बिल्डिंग**[9] इस तरह के मुहावरों का ऐतिहासिक संदर्भ बहुत पुराना नहीं होता, दो से तीन बार एक ही तरह की घटना घटी और चैनल मुहावरों का प्रयोग करने लगता है। लेकिन इन मुहावरों के अर्थ को समझने के लिए समाचार के संदर्भ को समझना अनिवार्य है।

2. बाज़ार, प्रतिस्पर्धा और *आजतक* की भाषा

चैनल की सफलता एवं लोकप्रियता पूरी तरह दर्शकों पर निर्भर करता है। दर्शक ही वह मुख्य बिंदु है जहाँ पर आकर चैनल को बहुत ज़्यादा मेहनत करनी पड़ती है। एक चैनल को देखते-देखते दर्शक अगर दूसरी चैनल पर चला जाता है तो इसका साफ़ मतलब है कि पहले वाले चैनल में दर्शक को अपने आगे बने रहने का प्रयास करता है, यह प्रयास भाषा को लेकर कई स्तरों पर किया जाता है।

सबसे पहले तो *आजतक* उस भाषा का प्रयोग नहीं करता जो दर्शकों को कुछ अलग लगे, अपने से भिन्न लगे, जिसे कि हम आम आदमी के संदर्भ में बात कर रहे हैं, लेकिन इससे भी महत्त्वपूर्ण बात है कि *आजतक* ने लोगों की मन:स्थितियों के अनुरूप भाषा-प्रयोग किया है। दर्शक जो कि ख़बरें तो चाहता है, लेकिन महज़ सूचना के रूप में नहीं, बुलेटिन में भी वही रोचकता चाहता है जो किसी टीवी सीरियल में होती है। बुलेटिन/समाचार में यह रोचकता आए इसके लिए *आजतक* समाचार की प्रकृति को ही बदल देता है। और ऐसा करने में भाषा की बड़ी भूमिका होती है। *आजतक* समाचार सूचना को मनोरंजन की शक्ल में परिवर्तित कर देता है। एफ़एम चैनलों के संदर्भ में 'इन्फ़ोटेन्मेंट' का जो एप्रोच है, काफ़ी हद तक वही एप्रोच *आजतक* भी अपनाता है।

सूचना को इन्फ़ोटेन्मेंट की शक्ल में बदलने के लिए *आजतक* भाषा के बने-बनाए फ़्रेम को तोड़ता है जो भाषा घटना को सीधे-सीधे व्यक्त करती है। उसकी जगह ऐसी भाषा का प्रयोग कि सूचना जानते हुए भी फ़िल्म, सीरियल, साहित्य या हास्य का आनंद मिल सके।

"नन्हें कोपलों की तरह इन हाथों पर गाँव वालों की नजर पड़ी तो उसे निकल लिया।"[14]

टेलीविज़न की भाषा के हिसाब से विचार करें तो नन्हें कोपलों जैसे प्रयोग उचित नहीं है, सम्प्रेषणीयता को लेकर सवाल खड़े हो सकते हैं, कि कितने लोग समझ पाएँगे, इसका अर्थ लेकिन बीच-बीच में साहित्यिक मूड को व्यक्त करता है, जो भाषा को लेकर विविधिता की ओर संकेत करता है।

"जब तक मजबूरियाँ बिकेंगी, तब तक इंसान का सौदा होता रहेगा।"[15]

बाज़ार की जबरदस्त प्रतिस्पर्धा के बीच भी चैनल की भाषा भावनात्मक हो जाती है। ऐसा इसलिए कि समाचार चैनल को लेकर लोगों के बीच इसके व्यावसायिक होने की छवि बन रही है, वह टूट जाए। लोगों में यह विश्वास पैदा हो कि *आजतक* लोगों के लिए प्रतिबद्ध है। लेकिन भाषा का ऐसा साहित्यिक एवं भावनात्मक प्रयोग भाषा के एक ढर्रे की होने की धारणा को तोड़ने के लिए किया जाता है। *आजतक* की भाषा का यह स्थापित ढर्रा नहीं है।

इसके अतिरिक्त रोचकता और बाँधे रखने के क्रम में *आजतक* ख़बरों की सीरियसनेस को तोड़ता है। मुद्दे प्राय: गंभीर भी है और उस पर विमर्श चल रहा है, ऐसे में दर्शक बहुत प्रबुद्ध नहीं है, लेकिन चैनल के टीआरपी के लिए उसे चैनल के आगे बने रहना ज़रूरी है। लिहाज़ा चैनल उस गंभीर विमर्श में मौजूद सीरियसनेस को ात्म करने की कोशिश करता है जोकि दर्शक कार्यक्रम से खुद को जोड़ सके, बीच-बीच में वह हल्का-फुल मनोरंजन कर सके।

"पाकिस्तान बोले सेक्स-सेक्स"[16]

भारतीय दर्शक को पाकिस्तान के बारे में जानने में रूचि है और ख़ासकर उन बातों को जानने में जो कि उस देश की मान्यताओं के उलट है। पाकिस्तान में पाबंदी के बावजूद सबसे ज़्यादा लोग सेक्स की साइट पर जाते हैं। अब किस उम्र के, किस तबक़े के लोग जाते हैं उनका कितना प्रतिशत है, इससे चैनल को कुछ खास लेना-देना नहीं है, उसने इसके लिए सीधा "पाकिस्तान बोले सेक्स-सेक्स" का प्रयोग कर दिया, या "दिल माँगे सेक्स" जैसे हेडर का प्रयोग किया। ऐसा करने से पाकिस्तान की

सामाजिक संरचना, लोगों की मन:स्थिति और बदलते सामाजिक संदर्भ जैसे सवाल बहुत पीछे छूट जाते हैं, ख़बर की सीरियसनेस ख़त्म हो जाती है, यह अलग बात है कि इस सतही विमर्श से ज़्यादा से ज़्यादा दर्शक जुड़ जाते हैं।

चैनल को बाज़ार से प्रतिस्पर्धा इसलिए भी है कि यह पूरी तरह व्यावसायिक प्रबंधन के आधार पर कार्य करता है, जिसमें बड़ी पूंजी निवेश के साथ ही हमेशा मुनाफ़े की भी चिंता बनी रहती है, इसलिए एक चैनल की प्रतिस्पर्धा दूसरे चैनलों से तो है ही, साथ ही बड़े स्तर पर व्यवसाय कर रहे दूसरे क्षेत्र की कम्पनियों से भी है।

"जिस मोबाइल के सहारे आप पूरी दुनिया को मुट्टी में करने की बात करते हैं, वह कितना घातक हो सकता है, ये आप देख सकते हैं।"[17]

एक घटना की चर्चा हो रही है। इन्दौर में एक व्यक्ति के घर नोकिया का एक मोबाइल फट गया और दुर्घटना होते-होते बची। इसे ख़बर के रूप में प्रसारित करने के लिए *आजतक* रिलायंस मोबाइल के पंचलाइन "कर लो दुनिया मुठ्ठी में" को उठाता है और एक निगेटिव इमेज बनती है। इसलिए समाचारों में प्रयोग की जानेवाली भाषा तटस्थ होकर काम करती है, यह धारणा पूरी तरह टूटती है।

चैनल अपने नफ़े-नुकसान के हिसाब से व्यक्ति, कम्पनी या घटना के लिए भाषा प्रयोग करता है और इमेज बिल्डिंग का काम करता है। बाज़ार के बीच चैनल की यह बड़ी गतिविधि है। इस तरह सीरियसनेस को खत्म करने के पीछे, रोचकता पैदा करने के पीछे और भाषाई फ्रेम को तोड़ने के पीछे चैनल की व्यावसायिक रणनीति काम करती है और भाषा लगातार इस मामले में सहयोग करती है। इसलिए आजतक की भाषिक प्रस्तुत को ख़बर प्रसारित करने का एक माध्यम भर समझने से चैनल की रणनीति का बड़ा हिस्सा अनछुआ रह जाता है।

चैनल में भाषा, जिसका स्वरूप बहुत तटस्थ माना जाता है, *आजतक* उसी के ज़रिए एक संस्कृति निर्मित करता है, जो लगातार उसके पक्ष में काम करता है, दर्शकों में विश्वास पैदा करने की कोशिश करता है और व्यावसायिक दृष्टि से अपने को मजबूत करता है। यह शब्दों का प्रयोग माध्यम से अधिक स्ट्रैटजी है।

संदर्भ-सूची

1 ख़बर: 'सुनीता विलियम्स लौट रही हैं', ऐंकर-दीपक चौरसिया 1:20 बजे रात

2 ख़बर: 1:22 बजे रात

3 ख़बर: 'सेक्स की चाहत', ऐंकर-सोनिया सिंह, 12:04 बजे रात, जून 28, 2007

4 ख़बर: 'माँ ने दफ़नाया बच्ची को', ऐंकर-पूण्य प्रसून वाजपेयी 9:58 बजे रात, जुलाई-5, 2007

5 कार्यक्रम 'दस्तक', ऐंकर-पुण्य प्रसून वाजपेयी, 10:05 बजे रात जुलाई 5, 2007

6 ख़बर: 'ब्लू लाइन ने टक्कर मारा', 7:29 बजे शाम, जुलाई 04, 2007

7 ख़बर: 'पाकिस्तान में सेक्स की चाहत', ऐंकर-सोनिया सिंह 12:04 बजे रात, जून-28, 2007

8 ख़बर: 'पाकिस्तान में सेक्स की चाहत', ऐंकर-सोनिया सिंह 12:12 बजे रात, जून 28, 2007

9 कार्यक्रम 'दस्तक', ऐंकर-पुण्य प्रसून वाजपेयी 10:07 बजे, रात जुलाई 5, 2007

10 ख़बर: 'टीटीई ने ट्रेन से फेंका' 11:30 बजे, रात 23 जून, 2007,

11 ख़बर: 'पाकिस्तान में सेक्स की चाहत', रिपोर्टर, संजीव चौहान, 12:25 बजे रात, जून 28,

2007

12 ख़बर: 'मासूम को दफ़नाया', ऐंकर-पुण्य प्रसून वाजपेयी, 10:06 बजे रात जुलाई 05, 2007

13 ख़बर: 'स्ट्रिपटीज पार्टियाँ', एंकर-सम्सताहिर ख़ान 12:53 बजे रात, 30 जून 2007

14 ख़बर: 'पाकिस्तान में सेक्स की चाहत', ऐंकर-सोनिया सिंह, 12:04 बजे रात 28 जून 2007

15 वही

16 ख़बर: 'सावधान। आपकी जेब में बम', ऐंकर-श्वेता, 6:19 बजे शाम 20 जुलाई 2007